इकाई - 2
सूरदास

व्याख्या

हमारे हरि .... चकरी ॥

→ उपर्युक्त पद्यांश भक्ति काल की सगुण भक्ति धारा की कृष्ण भक्ति शाखा के प्रवर्तक सूरदास द्वारा विरचित विप्रलंभ काव्य "भ्रमर गीत" से उद्धृत है। इसमें कृष्ण के द्वारा गोपियों को समझाने के लिए भेजे गए दूत उद्धव और गोपियों के बीच चातुर्यपूर्ण वार्तालाप है। उद्धव गोपियों को ज्ञान, योग और निर्गुण ईश्वर को अपनाने की बात करता है तो गोपियाँ प्रत्युत्तर में प्रेम और सगुण ईश्वर कृष्ण के प्रति एकनिष्ठता दर्शाती है। साथ ही योग को स्वीकार नहीं करने की बात भी कहती है। इस पद्यांश में गोपियाँ उद्धव से कृष्ण को नहीं छोड़ने की बात कहते हुए उनके प्रति अपने विश्वास को दर्शाती हैं -

व्याख्या →

गोपियाँ उद्धव को कहती हैं कि हमारे कृष्ण हारिल पक्षी की लकड़ी के समान है और हमने नंद के पुत्र कृष्ण को मनसा, वाचा और कर्मणा के द्वारा अपने हृदय में दृढ़ता से के साथ पकड़ के रखा है, जैसे कि हारिल पक्षी अपनी मृत्यु के भय से अपने पंजों में विद्यमान लकड़ी

को अपने से अलग नहीं करता है। तत्पश्चात वे कहती हैं कि हम जागते - सोते और सपने में भी प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण को याद करती रहती हैं। हे भ्रमर अर्थात उद्धव! आपके योग को ग्रहण करने को संदेश हमारे लिए कड़वी ककड़ी के समान है अर्थात ग्रहण करने योग्य नहीं है। तुम हमारे लिए वही रोग ले आए हो जिसके बारे में न तो देखा है, न सुना है और न ही उसका भोग किया है। यह संदेश उन व्यक्तियों को स्वीकार्य है जिनके मन चंचलता से युक्त हैं।

विशेष →

1. उपर्युक्त पद्यावतरण में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग किया गया है।
2. इस पद्य खण्ड की भाषा साहित्यिक ब्रज भाषा है और शैली गीत- शैली है जो कि सरल एवं सरस है।
3. इस पद्यांश में प्रसाद एवं माधुर्य गुणों का प्रयोग किया गया है।
4. इस पद्यावतरण में श्रृंगार रस के भेद वियोग श्रृंगार का प्रयोग किया गया है।
5. इसमें लक्षणा शब्द शक्ति का प्रयोग किया गया है।

रामचरितमानस - व्याख्या

नाथ न मोहि - - - - - - - - - - - सुगंध बसाई॥

प्रसंग: उपर्युक्त पद्यांश भक्तिकाल की सगुण भक्तिधारा की राममार्गी शाखा के प्रवर्तक गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित महाकाव्य "रामचरितमानस" के काण्ड 'उतरकाण्ड' से लिया गया है। इस काण्ड में मुख्यतया भक्ति-भावना का विश्लेषण किया गया है। इसमें विभिन्न वार्तालापों द्वारा संतों और असंतों के लक्षणों और भक्ति का गुणगान किया गया है। तुलसी मानते हैं कि व्यक्ति सांसारिक बन्धनों से मुक्त होकर एवं एकनिष्ठ होकर सच्चे हृदय से ईश्वर को प्राप्त करने का प्रयास करे तो उसे सफलता मिलने की संभावना है। उपर्युक्त पद्यांश में भरत भगवान राम से संतों के लक्षण बताने के बारे में कह रहे हैं -

व्याख्या: भरत भगवान श्री राम से कह रहे हैं कि हे स्वामी! मुझे स्वप्न में भी कोई दुःख, संदेह और मोह नहीं है। हे दया और आनन्द की राशि! यह सब केवल आपकी दया का ही प्रभाव है। हे दया के भण्डार! मैं आपसे एक धृष्टता कर रहा हूँ। इसका कारण यह है कि मैं आपका दास हूँ और आप अपने दासों को सुख देने वाले हैं। हे रघुनाथ! मैं आपसे अच्छे पुरुषों के महत्त्व के बारे में पूछना चाहता हूँ, क्योंकि इनके बारे में वेदों और पुराणों में भी बहुत कुछ कहा गया है। भरत कहते हैं कि आपने भी अपने मुख से उन अच्छे पुरुषों की प्रशंसा की है और आपको उनसे अत्यधिक

प्रेम भी है। अतः मैं आपसे उन अच्छे पुरुषों के लक्षणों के बारे में जानना चाहता हूँ ताकि मैं भी उनकी पहचान कर सकूँ। मेरा मानना है कि आप दया के सागर हैं और सभी गुणों को जानने में चतुर हैं। आगे भरत भगवान श्री राम से कहते हैं कि आप मुझे संतों और असंतों को अलग-अलग करके उनके बारे मे समझाकर अपनी बात कहें क्योंकि आप शरण में आने वाले व्यक्ति की रक्षा करने वाले (रक्षक) माने जाते हैं। तब भगवान श्री राम भरत को कहते हैं कि हे भाई! संतों के लक्षण तो असंख्य हैं और वे वेदों और पुराणों में भी प्रसिद्ध हैं। हे भाई भरत! संतों और असंतों के कार्य उसी प्रकार से अलग होते हैं जैसे कुल्हाड़ी और चन्दन के व्यवहार में अन्तर होता है। कुल्हाड़ी चन्दन के वृक्ष को काटती है, जबकि चन्दन का वृक्ष अपनी सुगंध से उस कुल्हाड़ी को सुगंधित कर देता है। इसका कारण यह है कि कुल्हाड़ी में असंत (दुर्जन) और चंदन के वृक्ष में संत (सज्जन) के गुण विद्यमान रहते है।

1. इस पद्यावतरण की भाषा साहित्यिक अवधी भाषा है। इसमें दोहा-चौपाई शैली का प्रयोग किया गया है।
2. इस पद्य खण्ड में दोहा और चौपाई छंद प्रयुक्त हैं।
3. इसमें अनुप्रास अलंकार का प्रयोग किया गया है।
4. इस पद्य खण्ड में शांत रस प्रयुक्त है।
5. इसमें माधुर्य गुण का समावेश है।
6. इस पद्यावतरण में लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग किया गया है।

—x—

Scanned with CamScanner

व्याख्या

बिहारी

मीनैं हूँ ------------------ लौनु ॥
अजौं तर्यौंना ------------- कै संग ॥
जम-करि ---------------- गुन गाउ ॥

प्रसंग →
प्रस्तुत पंघाश रीतिकाल की रीति-सिद्ध धारा के कवि बिहारीलाल द्वारा लिखित ग्रंथ "बिहारी "सतसई" से लिया गया है। उस कृति मे मुख्यतः भक्ति, श्रृंगार और नीति से संबंधित बातों को सारगर्भित तरीके से प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने अपने दोहों के माध्यम से संक्षिप्त बात कह कर विस्तृत भावों को अभिव्यक्त किया है। उपर्युक्त पद्यावतरण में प्रथम दोहे में नायिका नायक के रूप से मोहित होकर अपनी परतंत्रता का ज्ञान कराती है और दूसरे एवं तीसरे दोहों में उनकी भक्ति-भावना के दर्शन होते हैं-

व्याख्या → नायिका अपनी सखी से कहती है कि मैंने नायक के रूप को देखा और मैं उसके रूप पर मुग्ध हो गयी। मेरा मन नायक के रूप में इस तरह मिल गया जैसे कि पानी में नमक मिल जाता है। करोड़ों प्रयत्न करने पर भी नायक पर मुग्ध हुए मेरे

मन को नायक से कौन अलग कर सकता है अर्थात् कोई भी व्यक्ति इसे अलग नही कर सकता है।

आज भी अनन्य भाव से कानों का सेवन करता हुआ कानो का आभूषण कर्णफूल ही बना रहा जबकि नाक के आभूषण नथ ने मोती का साथ प्राप्त करके नासिका के उच्च पद को प्राप्त कर लिया। ठीक इसी प्रकार आज भी अनन्य भाव से वेदों का सेवन करता हुआ मनुष्य पूर्णतः मुक्त नहीं हो सका है जबकि तुच्छ व्यक्ति ने पुण्य आत्मा वाले व्यक्ति का साथ प्राप्त करके स्वर्ग को प्राप्त कर लिया है।

कवि स्वयं से कहते है कि तू स्वयं यमराज रूपी हाथी के मुँह के नीचे पड़ा हुआ है। अब तो तू विषय-भोगों को छोड़कर ईश्वर (विष्णु अथवा नरहरिदास) के गुणों का ध्यान कर ताकि तुझे मुक्ति प्राप्त हो सके।

विशेष →

i) इस पंद्यांश की भाषा शुद्ध ब्रज भाषा है। और इस पर बुन्देलखण्डी और फ़ारसी का प्रभाव है।

ii) इस पद्यांश मे अनुप्रास और श्लेष अंलकारों का प्रयोग किया गया है।

Scanned with CamScanner

(iii) इसमें माधुर्य गुण का समावेश है।

(iv) इसमें समास-शैली और ~~[illegible]~~ नाद-सौन्दर्य को अपनाया गया है।

(v) ~~इसमें प्रत्येक दोहे में दोहा छंद का प्रयोग किया गया है।~~ के प्रत्येक दोहे

(v) इस पद्यावतरण में दोहा छंद का प्रयोग किया गया है। यह एक मात्रिक छंद है और इसमें प्रथम और तृतीय चरणों में 13-13 मात्राएँ और द्वितीय एवं चतुर्थ चरणों में 11-11 मात्राएँ होती हैं।

Scanned with CamScanner

घनानन्द

हीन भएँ ---------- जान ही जानै ॥

प्रसंग →

उपर्युक्त पद्यांश रीति काल के रीति मुक्त धारा के प्रवर्तक घनानन्द द्वारा विरचित "घनानन्द कवित्त" नामक काव्य-ग्रंथ से लिया गया है। जनश्रुति के अनुसार घनानन्द मुहम्मद शाह रंगीले के दरबार में मीर मुंशी के पद पर कार्य करते हुए उनके निजी सचिव बन गए थे। इनकी आसक्ति सुजान नामक वैश्या के प्रति थी। कुछ दरबारियों की साजिश से इन्हें दरबार छोड़ना पड़ा। उस समय सुजान के द्वारा इनके साथ चलने के लिए अस्वीकार करने पर घनानन्द का प्रेम राधा-कृष्ण के प्रेम में परिवर्तित हो गया। इसके बाद उनका संपूर्ण जीवन सुजान के प्रति विरह में व्यतीत हुआ। इस पद्यावतरण में घनानन्द सुजान के प्रति अपने दुःख को प्रकट करते हुए कहते हैं-

व्याख्या →

घनानन्द सुजान को कहते हैं कि मछली जल से रहित होकर दुःखी अथवा विवश हो जाती है परंतु वह भी मेरी तुम्हारे प्रति व्याकुलता की समानता।

नहीं कर सकती है। मछली प्रेमी जल को कलंक लगाकर और निराश होकर कायरता के साथ अपने प्राणों का त्याग कर देती है। अचेतन जल चेतन मछली की प्रेम की परम्परा को समझ नहीं पाता है इसीलिए मछली को अपने प्राणों का त्याग करके उसके प्रति अपने एकनिष्ठ प्रेम का प्रमाण देना पड़ता है। मेरा प्रेम इस मछली के जल के प्रति दर्शाए गए प्रेम से भी श्रेष्ठ है क्योंकि यहाँ पर प्रेम करने वाले दोनों ही व्यक्ति चेतन हैं। इस मन की जो दशा है, उसे तो प्राणों के प्राण और अत्याधिक आनन्द प्रदान करने वाले सुजान ही जान सकते हैं।

विशेष→

1. उपर्युक्त पद्य खण्ड में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग हुआ है।
2. इस पद्यांश की भाषा ब्रज भाषा है और यह भाषा भावों के अनुसार चलने वाली है।
3. इसमें श्रृंगार रस के भेद वियोग अथवा विप्रलंभ श्रृंगार का प्रयोग किया गया है।
4. इस पद्यावतरण में प्रसाद तथा माधुर्य गुणों का समावेश मिलता है।
5. इसमें लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग किया है।

महत्त्वपूर्ण स्थलों की व्याख्या

(१) अधिकार सुख कितना—एक सैनिक हैं। (पृ० ६)

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रसाद जी द्वारा लिखित "स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य' नाटक के प्रथम दृश्य के आरम्भिक भाग से अवतरित की गई हैं। यहाँ उज्ज-यिनी में गुप्त साम्राज्य के स्कन्धावार में युवराज स्कन्दगुप्त स्वगत कथन करते हुए अधिकारों के प्रति उदासीन भाव व्यक्त करते हैं।

व्याख्या—युवराज स्कन्दगुप्त का कहना है कि प्रत्येक मानव-प्राणी के हृदय में अधिकार प्राप्ति की लालसा बलवती होती है। इसी अधिकार को ग्रहण करके व्यक्ति अपने को कितना आनन्दित, उन्मादित और उत्साह से पूर्ण अनु-भव करता है। अर्थात् अधिकार प्राप्त कर उसे एक प्रकार का नशा-सा हो जाता है; किन्तु इस अधिकार-प्राप्ति का सुख सारहीन है, महत्त्वहीन है और व्यर्थ है। इसका अपने आप में कोई अस्तित्व नहीं है। अधिकारी व्यक्ति अपने आपको नियमों का स्रष्टा और नियामक समझने लगता है। यही अधिकार-लालसा उसको दूसरों के प्रति स्वार्थ-भावना से अभिभूत होकर कार्य करने की प्रेरणा देती है। जिस प्रकार पर्व और त्यौहारों के समय पर परिवार सेवा करते हैं और युद्ध में ढाल ही अपने आपको अस्त्रों में सर्वोपरि समझती है; यद्यपि उसका काम तो केवल संघर्ष-रत रहना ही होता है, इससे अधिक उसका कोई महत्त्व नहीं होता, उसी प्रकार अधिकारी व्यक्ति भी केवल अधिकार होने के कारण ही कर्मक्षेत्र में कार्यरत रहता है, किन्तु मुझे इन सबसे क्या मतलब ? मैं तो इस महान् साम्राज्य का एक तुच्छ सैनिक हूँ, इससे अधिक मेरा कोई अस्तित्व नहीं।

विशेष—(१) "अधिकार-सुख कितना मादक और सारहीन है" में विरोध प्रकट किया गया है।

(२) स्कन्दगुप्त की अधिकारों के प्रति उदासीनेता यहाँ व्यक्त है।

Scanned with CamScanner

(३) भाषा परिष्कृति एवं संस्कृतनिष्ठ है।

(४) "उत्सवों में परिचारक···लोलुप मनुष्य है" में प्रतीप अलंकार का सुन्दर प्रयोग है।

Scanned with CamScanner